International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

स्थानीय स्वशासन में महिलाओं की भागीदारी

डॉ. जगमोहन कुमार
पीएच.डी., राजनीति विज्ञान विभाग
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार
मो.नं.- 9973613716, ई-मेल: jkumar240584@gmail.com

सारांश:

भारत में स्थानीय स्वशासन का इतिहास बहुत प्राचीन है । मनुष्य ने जब पहली बार सामुदायिक जीवन को स्वीकारा तभी से ग्राम-व्यवस्था के तहत स्थानीय स्वशासन का अभ्युदय माना जा सकता है । वैदिक युग में प्रत्येक गांव स्वयं में प्रजातंत्र की लघु इकाई थी । यहाँ की नगरीय शासन व्यवस्था भी काफी पुरानी है । सिन्धु घाटी सभ्यता का प्रमाण इसका उदहारण है। स्थानीय स्वशासन प्रणाली सत्ता का विकेन्द्रीकरण है। देश में तीन स्तर की सरकारें हैं- केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार व स्थानीय सरकार यानि स्थानीय स्वशासन । स्थानीय संस्थाएँ जनतंत्र का आधार हैं। ये संस्थाएँ जनता के प्रतिनिधियों को राजनीति में भाग लेने का अवसर प्रदान करती हैं। जनता को राजनीतिक प्रशिक्षण प्रदान करती हैं । जनता में जागृति लाती हैं एवं जनता में आत्मविश्वास और सहयोग की भावना पैदा करती हैं जो लोकतंत्र की सफलता के लिए नितांत आवश्यक है । इन संस्थाओं को 'जनतंत्र की नर्सरी' एवं 'प्रयोगशाला' भी कहा जाता है । स्थानीय विकास एवं समस्याओं के निदान हेतु जिम्मेवार स्थानीय संस्थाओं में आधी आबादी की सक्रिय व निर्णायक भागीदारी के बिना शत प्रतिशत लक्ष्य प्राप्ति की परिकल्पना बेमानी होगी।

मुख्य शब्द: स्थानीय स्वशासन, संस्थाएँ, विकेन्द्रीकरण, जनतंत्र, विकास

प्रस्तावना:

भारत में पंचायतों का प्रचलन प्राचीन काल से रहा है जो जनकल्याण की भावना से ओत-प्रोत है । मानव सृष्टि के आदिकाल से ही मनुष्य को परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने के लिए निरंतर संघर्ष करना पड़ा। कालांतर में मानव ने परिवार और पुनः परिवारों के समूह से गांव बनाया । वैदिक काल तक पहुँचते-पहुँचते गांवों ने इतना विकसित रूप धारण कर लिया कि वे सभ्यता के केन्द्र बन गए । स्थानीय स्वशासन को सीमित स्वतंत्रता प्राप्त है । इसके कार्यक्षेत्र में स्थानीयता पर विशेष बल दिया गया है । स्पष्टतः स्थानीय स्वशासन स्थानीयता और सीमित स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति है । इसकी संरचना स्थानीय लोगों द्वारा स्थानीय विषयों का प्रबंध करने के लिए की जाती है । कल्याणकारी राज्य की कल्पना के मूल में यही भावना रही है कि केन्द्र व राज्य सरकार के अपने राष्ट्रीय व राजकीय महत्त्व के कई महत्वपूर्ण कार्य हैं । यदि स्थानीय स्तर के

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

कार्यों में ही ये उलझी रही तो अपने स्तर के कार्यों का संपादन भली भांति करने में सक्षम नहीं होगी । अतः स्थानीय संस्थाएँ स्थानीय दायित्वों का निर्वहन करते हुए कार्यभार को कम कर देती है । स्थानीय स्वायत्त शासन से सरकारी व्यय की भारी बचत होती है । आधुनिक युग को नागरिकों की उभरती हुई आकांक्षाओं का युग माना जाता है। वर्तमान समय में लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के सहज परिणामस्वरूप शासन संबंधी कार्यों का अत्यधिक विस्तार हुआ है । यह धारणा सर्वमान्य है कि नागरिक जीवन के सभी आयामों के उन्नयन में आधुनिक सरकारों का निर्णायक योगदान रहा है । उपर्युक्त नागरिक सुविधाओं की पूर्ति में स्थानीय स्वशासन की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

अध्ययन का औचित्य:

भारत जैसे विकासशील एवं जनाधिक्य वाले देश में समस्त नागरिकों के लिए विभिन्न आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराना एवं उनकी समस्याओं का निपटारा करना बहुत बड़ी जिम्मेवारी है । इन समस्याओं का समाधान स्थानीय स्तर पर ही बेहतर ढंग से किया जा सकता है । लैंगिक असमानता आज भी मुख्य सामाजिक मुद्दा बना हुआ है, जिसमें महिलाएँ पुरूषवादी वर्चस्व की शिकार है। पुरूष और महिला को वास्तव में बराबरी का दर्जा देने के लिए महिला सशक्तिकरण में तेजी लाने की जरूरत है । सभी क्षेत्रों में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी एवं उनके उत्थान से ही समतामूलक समाज का निर्माण किया जा सकता है । क्योंकि महिला एवं पुरूष के बीच की असमानता कई समस्याओं को जन्म देती है जो राष्ट्र के विकास में बड़ी बाधा के रूप में सामने आती रहती है।

अध्ययन के स्रोत एवं पद्धति:

यह अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों स्रोतों पर आधारित है। समाचार-पत्र, सरकारी दस्तावेज व आँकड़ें, पुस्तक, पत्र-पत्रिका आदि की सूचनाएँ इसके आधार हैं। इन सूचनाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

स्थानीय स्वशासन का विकास क्रम:

वर्तमान में देश में जो स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था है वह मुख्य रूप से दो प्रकार की है- पंचायती राज व्यवस्था एवं नगर निकाय व्यवस्था । ये दोनों व्यवस्थाएं विभिन्न काल में विभिन्न स्वरूपों से होते हुए आज के स्वरुप में हमारे समक्ष कार्यरत हैं। इनके विकास क्रम को हमें अलग-अलग समझना होगा।

पंचायती राज व्यवस्था:

भारत में पंचायती राज का इतिहास वैदिक काल से पुराना है, भले ही उस समय लिपिबद्ध नहीं किया गया, पर समाज की सभ्यता, रीति-रिवाज, रहन-सहन आदि आज भी इसकी प्राचीनता को प्रमाणित कर रहे हैं

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

।[1] भारत गांवों का देश है, पंचायती राज व्यवस्था भारत के लिए नई बात नहीं है क्योंकि वैदिक काल, मौर्य काल, गुप्त काल, मुगल काल लगभग हर काल और दशक में गांवों की जनता को बुनियादी सुविधाओं को उपलब्ध कराने तथा उसकी समस्याओं लगभग सभी कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । वैदिक युग में जब नगरों का स्थान नगण्य था, ग्राम-शासन व्यवस्था का महत्त्व अधिक था । "इस काल में जो स्थानीय शासन की प्रमुख संस्थाएँ थी वे इस प्रकार की थी- सभा, समितियाँ, कुल, गण, जाति, पुंग, वृत्त, श्रेणी, संघ, समुदाय, समूह, परिषद और चरण ।"[2] कालान्तर में यह व्यवस्था चयनित पाँच जनप्रतिनिधियों (Council of Five Persons) के द्वारा संचालित होने लगी और पंचायत के रूप में लोकप्रिय हुई।

पंचायत वर्तमान समय में सरकारी तंत्र के सबसे निचले पायदान पर स्थित प्रशासनिक इकाई है । प्रारंभ में समग्र ग्राम्य विकास के उद्देश्य से पंचायत को अत्यधिक शक्तियाँ (कार्यपालिका एवं न्यायपालिका) प्राप्त थीं किन्तु ब्रितानी शासन काल में पंचायत का महत्व प्रशासकीय प्राथमिकताओं से अलग हो गया क्योंकि सरकार का उद्देश्य नियंत्रित निकाय में निहित हो गया । 1765 ई. में बक्सर युद्ध में पराजय के बाद मुगल बादशाह की सहमति से दीवान के कार्यालय की स्थापना हुई तो पंचायत ध्वस्त हो गए । 1857 के सिपाही विद्रोह के पश्चात ब्रिटिश हुकूमत द्वारा यह प्रयास किया गया था कि पंचायत की स्थापना कर उसे छोटी-मोटी घटनाओं को देखने का अधिकार दिया जाए । इस संबंध में लार्ड रिपन की घोषणा काफी महत्वपूर्ण साबित हुई जिसने स्थानीय स्वशासन पर बल दिया । रिपन ने 1882 ई. में प्रशासनिक कुशलता एवं राजनीतिक शिक्षा के उद्देश्य से स्थानीय स्वशासन के महत्व को प्रकाशित किया । स्वतंत्रता आन्दोलन के प्राणतत्व महात्मा गांधी ने आन्दोलन के क्रम में पंचायतों के महत्व को समझ लिया था । ग्राम स्वराज की परिकल्पना पर उनका अत्यधिक जोर ग्राम पंचायत के महत्व की ओर ही इशारा करता है।

नगरीय शासन व्यवस्था:

ग्राम शासन व्यवस्था की तरह भारत में नगरीय शासन व्यवस्था भी अति प्राचीन है । प्राचीन भारत में स्थानीय स्वशासन को आज की भांति ही नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में विभाजित किया गया था । दोनों क्षेत्रों की प्रशासनिक व्यवस्था अलग-अलग रूप में की गई थी । भारत में वर्तमान नगरीय शासन ब्रिटिश सरकार की देन है।

सर जॉन मार्शल ने सिन्धु घाटी की सभ्यता का काल 325-275 ई. पूर्व निर्धारित किया है । हड़प्पा मोहनजोदड़ों की खुदाई से प्राप्त नगरों के भग्नावशेषों के आधार पर कहा जा सकता है कि ईस्वीं पूर्व दूसरी-तीसरी सहस्त्राब्दी से लेकर अब तक भारत में नगर प्रशासन का इतिहास रहा है ।[3] इसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता नगर सभ्यता थी । मौर्य काल में स्थानीय शासन बहुत ही विकसित था। गुप्तकाल में भी नगर प्रशासन की व्यवस्था लगभग मौर्यकालीन ही रही । "मुग़ल शासन काल में कस्बों और नगरों में नगरपालिका और कुशल पुलिस प्रबंध की व्यवस्था थी । कोतवाल मुख्य अधिकारी होता था ।"[4] ब्रिटिश शासन से पूर्व भारत में जो स्वायत्त शासन व्यवस्था थी उसे अंग्रेजों ने नष्ट कर दिया और उसके स्थान पर

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

अपनी पद्धति के समान भारत में स्थानीय स्वायत्त शासन की व्यवस्था की । फलतः प्राचीन एवं मध्यकालीन स्थानीय शासन व्यवस्था की मौलिकता लुप्त हो गई।

ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन काल में सर्वप्रथम 1687 ई. में कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स के आदेश से मद्रास में एक नगर निगम स्थापित किया गया था । 1726 में सभी प्रेसीडेंसी नगरों में स्थानीय संस्थाओं का निर्माण कर दिया गया । फलतः बम्बई और कलकत्ता नगर निगम अस्तित्व में आए । 1793 में पुनः अधिनियम को संशोधित कर स्थानीय स्वशासन संस्थाओं को संवैधानिक आधार प्रदान किया गया । 1814 में बड़े शहरों में बोर्ड समितियों का गठन किया गया। विभिन्न बाधाओं के बावजूद स्थानीय शासन संस्थाओं में प्रगति होती रही । 1860 के अंत तक भारत के लगभग प्रत्येक प्रमुख नगरों तथा कस्बों में नगरपालिकाओं की स्थापना कर दी गई।

भारत में सत्ता के विकेन्द्रीकरण की नीति का शुभारम्भ 1870 में लार्ड मेयो के प्रस्ताव से हुआ, जिसके तहत प्रांतीय सरकारों को अपने स्थानीय वित्त का प्रबंध करने के लिए कहा गया । "10 मई 1882 को लार्ड रिपन ने स्थानीय स्वशासन के विकास के संबंध में एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किया। इस प्रस्ताव ने ही आगे चलकर लार्ड रिपन को भारत में स्थानीय स्वशासन के जनक के रूप में स्थापित किया । लार्ड रिपन ने अपने प्रस्ताव में स्थानीय स्वशासन के दो उद्देश्य बताए । पहला- राजनीतिक एवं सार्वजनिक शिक्षा की प्रगति व दूसरा- स्थानीय लोगों का स्थानीय प्रबंध में भाग लेना ।"[5] दूसरा महत्वपूर्ण कदम 1907 में उठाया गया जब भारत सरकार ने स्वायत्त संस्थाओं पर विचार करने के लिए सी.ई.एच. हॉबहाउस की अध्यक्षता में एक विकेन्द्रीकरण आयोग (रॉयल कमीशन) की स्थापना की । आयोग ने 1909 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिस पर सरकार ने 1915 तक कोई निर्णय नहीं लिया।

भारत में नगरीय प्रशासन के विस्तार एवं विकास का काल 1919 से प्रारंभ होता है । सन 1920 में 'भारतीय शासन अधिनियम 1919' पारित किया गया । प्रान्तों में द्वैध शासन प्रणाली लागू की गई । कुछ विषय प्रान्तों को हस्तांतरित किये गए । स्थानीय स्वशासन विभाग प्रान्तों के निर्वाचित मंत्रियों के अधीन आ गया। इस काल में स्थानीय स्वशासन में बहुत कम प्रगति हुई जिसका प्रमुख कारण वित्त का विषय मंत्रियों के अधिकार में न होना, संस्थाओं के कार्यों में वृद्धि के अनुपात में साधनों में वृद्धि न होना एवं गैर-सरकारी अध्यक्षों का अनुचित दबाव पड़ना था । कुल मिलाकर 1935 के पूर्व तक निराशा ही हाथ लगी । 'भारतीय शासन अधिनियम 1935' का प्रांतीय भाग 1937 में लागू किया गया और प्रान्तों में द्वैध शासन के स्थान पर प्रांतीय स्वायत्त शासन स्थापित किया गया । स्थानीय स्वशासन अपने पूर्व स्वरुप को समाप्त कर नवीन व्यवस्था को अपनाकर सम्पूर्ण देश के प्रशासन का अभिन्न अंग बन गया। 1939 में प्रांतीय मंत्रिमंडलों के त्यागपत्र व द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण स्थानीय संस्थाओं की प्रगति रूक गई और यही स्थिति स्वतंत्रता प्राप्ति तक बनी रही।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

स्वतंत्र भारत में स्थानीय स्वशासन:

स्वतंत्र भारत के संविधान के अनुच्छेद 40 (राज्य की नीति के निदेशक तत्व) में पंचायतों का उल्लेख किया गया कि राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों। और अनुच्छेद 246 के माध्यम से स्थानीय स्वशासन से संबंधित किसी भी विषय के संबंध में कानून बनाने का अधिकार राज्य विधानमंडल को सौंपा गया ।[6] परन्तु नगरीय निकायों के बारे में ऐसा कोई निर्देश नहीं है। नगरीय स्वशासन का सन्दर्भ केवल सातवीं अनुसूची की राज्य सूची के क्रमांक 5 में उल्लिखित है जो इस प्रकार है- "स्थानीय शासन, अर्थात् नगर निगमों, सुधार न्यासों, जिला बोर्डों, खनन-बस्ती प्राधिकारियों और स्थानीय स्वशासन या ग्राम प्रशासन के प्रयोजनों के लिए अन्य स्थानीय प्राधिकारियों का गठन और शक्तियाँ।"[7]

संभावना थी कि स्वतंत्रता उपरांत नई संरचना में स्थानीय निकायों को राष्ट्रीय नीति के उपकरण के रूप में अधिक से अधिक प्रयुक्त किया जायेगा एवं उनके कार्यों में धीरे-धीरे वृद्धि होगी ।[8] परन्तु नगरीय निकायों को संवैधानिक मान्यता एवं उनके कार्यों, उनकी शक्तियों एवं संसाधनों के स्पष्ट वर्णन की अनुपस्थिति में वे उपेक्षित रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात ग्रामीण स्थानीय शासन की तुलना में नगरीय प्रशासन के विकास की गति इतनी धीमी रही कि वह लगभग नगण्य सी प्रतीत होती है । तीसरी पंचवर्षीय योजना में नगरीय शासन के महत्व को स्वीकार किया गया। उसमें कहा गया कि "नीति का सामान्य निर्देशन स्वशासित निकायों को प्रशासकीय एवं सामाजिक सेवाओं का जहाँ तक संभव हो, अधिक से अधिक माँग का दायित्व संभालने में सहायता एवं प्रोत्साहित करने की ओर होना चाहिए।"[9]

भारत की शासन प्रणाली लोकतान्त्रिक है । लोकतान्त्रिक देश का उद्देश्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति के कल्याण व विकास को सुनिश्चित करना होता है। लोकतंत्र को मजबूत बनाने में पंचायतों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। लोकतान्त्रिक व्यवस्था में पंचायती राज वह माध्यम है, जो शासन को सामान्य जनता के दरवाजे तक लाता है । प्राचीन काल से ही भारतीय गांवों में पंचायत किसी न किसी रूप में रही है जिनका स्वरुप और कार्य-क्षेत्र समय के साथ बदलता रहा है । स्वतंत्र भारत में पंचायती राज शब्द का अस्तित्व बलवंत राय मेहता के 'लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण' प्रतिवेदन से अस्तित्व में आया। बलवंत राय मेहता समिति की रिपोर्ट (1957) ने पंचायतों को लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण शासन की संस्थाएँ बनाने की बात कही । अशोक मेहता समिति ने पंचायतों को राजनीतिक संस्थाओं का रूप देने की सिफारिश (1978) की । जी.वी.के. राव समिति (1985) ने पंचायतों का संगठनात्मक व वित्तीय आधार मजबूत करने पर बल दिया । एल.एम.सिंघवी समिति (1986) ने पंचायतों को संवैधानिक संरक्षण देने की बात कही तो थुंगन समिति (1988) ने पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए सर्वप्रथम पंचायतों को कानूनी दर्जा देने संबंधी रिपोर्ट प्रस्तुत किया।

स्थानीय स्वशासन को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए तत्कालीन प्रधानमन्त्री राजीव गांधी ने 1989 में पंचायती राज एवं नगरपालिका सम्मेलनों (बंगलौर, कटक, दिल्ली) का आयोजन किया । इन सम्मेलनों में

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

पंचायतों एवं नगरपालिकाओं की समस्याओं पर लगभग 25,000 अनुभवशील एवं जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों के साथ पारस्परिक विचार-विमर्श किया गया । इन सम्मेलनों में यह बात समाने आई कि- स्थानीय निकायों में सुधार के लिए ऐसे संवैधानिक प्रबंध किये जायें जो स्थानीय निकायों को सुदृढ़ता प्रदान कर सके । सम्मेलन से प्राप्त अनुभवों एवं विचारों के आधार पर 64वाँ एवं 65वाँ संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा में पेश किया गया ।[10] ये विधेयक लोकसभा में तो पारित हो गए लेकिन राज्य सभा से पास नहीं हो सकें। 1991 में कांग्रेस के पुनः सत्ता में आने के बाद नरसिम्हाराव सरकार ने इस दिशा में सशक्त प्रयास किया।

73वाँ एवं 74वाँ संविधान संशोधन: एक ऐतिहासिक कदम

अंततः 73वें और 74वें संविधान संशोधन को दिसम्बर, 1992 में संसद द्वारा पारित कर दिया गया । इन संशोधनों के माध्यम से ग्रामीण और शहरी भारत में स्थानीय स्वशासन स्थापित हुआ । 24 अप्रैल 1993 को संविधान (73वाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 और 01 जून 1993 को संविधान (74वाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 के रूप में ये कानून प्रवर्तित हुए। इस तरह भारत में अब अपनी संघीय व्यवस्था में दो (केन्द्र सरकार व राज्य सरकार) नहीं तीन स्तरीय (तीसरा- स्थानीय स्वशासन) सरकारें हैं । इस ऐतिहासिक एक्ट के द्वारा गाँव एवं शहर की महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के लोगो को दिए गए आरक्षण ने हाशिये के लोगों की भागीदारी बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उपलब्ध सीटों की कुल संख्या में से एक-तिहाई सीटें एवं सभी स्तरों पर अध्यक्षों के एक-तिहाई पद भी महिलाओं के लिए आरक्षित है।

73वें और 74वें संविधान संशोधन के जरिये महिलाओं को एक-तिहाई का आरक्षण दिया गया । बिहार आधी आबादी यानि महिलाओं को ध्यान में रखते हुए उन्हें बिहार पंचायती राज (2006) एवं नगर निकाय (2007) में 50 प्रतिशत आरक्षण देने वाला देश का पहला राज्य बना । उसके बाद अब तक तीन बार चुनाव हुए जिसमें आधे से अधिक सीट पर महिलायें जीतकर आयीं ।[11] बिहार के 50% महिला आरक्षण वाले इस मॉडल को "आंध्र प्रदेश, असम, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश, झारखण्ड, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, राजस्थान, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उत्तराखंड, प. बंगाल" [12] ने अपनाकर देश के विकास में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी की महत्ता को बल प्रदान किया है।

महिला जनप्रतिनिधियों की स्थिति:

वर्तमान में देश में लगभग 2,50,000 पंचायती राज संस्थाएँ एवं शहरी स्थानीय निकाय हैं और तीन (3) मिलियन (30 लाख) से अधिक निर्वाचित स्थानीय स्वशासन प्रतिनिधि हैं । भारत में निर्वाचित पदों पर आसीन महिलाओं की संख्या विश्व में सर्वाधिक (1.4 मिलियन) है । इनमें से कुछ महिलाओं ने अपनी आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक आदि गतिविधियों से विभिन्न क्षेत्रों को प्रभावित ही नहीं किया है अपितु सशक्त एवं सार्थक उपस्थिति से अपनी पहचान भी बनाई है जो अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा-स्रोत हैं । लेकिन इनकी संख्या बहुत कम है।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

उपलब्ध विवरणों एवं अध्ययन में यह पाया गया है कि पंचायतों व नगर निकायों में लैंगिकता राजनीतिक प्रक्रिया के सभी स्तरों को जैसे- मतदान, प्रतिनिधित्व, नेतृत्व व निर्णय-निर्माण को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। पंचायतों में चुनी गई कुछ महिलाएँ जो आर्थिक रूप से सक्षम व शिक्षित हैं, वे पंचायतों में स्वतंत्र भूमिका निभा पाती हैं । किन्तु अधिकांश महिलाएँ जो कि आर्थिक स्तर पर पुरूषों पर निर्भर हैं और कम पढ़ी-लिखी हैं वे अपने अधिकारों का प्रयोग पुरूषों के दिशा-निर्देश में ही कर पाती हैं । महिला जनप्रतिनिधियों की सक्रियता एवं उनकी स्थिति का तीन मुख्य बिन्दुओं से आकलन किया जा सकता है । वे हैं- राजनीतिक सहभागिता, निर्णय-निर्माण और नेतृत्व व प्रभाव।

राजनीतिक सहभागिता:

आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है । धन का इतना अधिक प्रभाव है कि एक साधारण आर्थिक स्थिति की महिला आरक्षण के बावजूद चुनाव लड़ने के बारे में सोच नहीं सकती है । अधिकांश महिला प्रतिनिधियों की राजनीति में आने की इच्छा उनकी स्वयं की नहीं है । ऐसे प्रतिनिधियों की राजनीति में रुचि नहीं होने के कारण उनकी वास्तविक सहभागिता नगण्य रहती है। राजनीतिक संस्थाओं व संगठनों की बैठकों में महिलाओं की उपस्थिति तो रहती है लेकिन उनकी सक्रियता कम देखी जाती है । यदि महिलाएँ थोड़ा भी पढ़ना-लिखना जानती है तो उनकी राजनीतिक सहभागिता कुछ हद तक बढ़ जाती है । ऐसा भी पाया जाता है कि चुनाव के बाद पद पाने वाली कई महिला प्रतिनिधियों में सकारात्मक भाव एवं बदलाव आने लगते हैं।

राजनीति में वही महिलाएँ आ पा रही हैं, जो किसी राजनीतिक परिवार की हैं या उन्हें किसी बड़े राजनेता का संरक्षण प्राप्त है । राजनीति में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को लेकर विभिन्न पार्टियों का रूख एक जैसा है। महिला सशक्तिकरण पर जब भी बहस छिड़ती है, अक्सर राजनीति में महिलाओं के कम प्रतिनिधित्व पर अफ़सोस जताया जाता है । समाज और राजनीति में महिलाओं को बराबर की हिस्सेदारी देने की बात सार्वजानिक मंचों पर आए दिन होती है, लेकिन उस पर अमल करने में सभी पार्टियाँ उदासीनता बरतती आई है । यह असलियत है कि दुनिया के सबसे बड़े लोकतान्त्रिक देश में विधायिका स्तर पर महिलाओं का प्रतिनिधित्व अन्य देशों के मुकाबले काफी कम है जो महिलाओं के प्रति भेदभावपूर्ण राजनीतिक मानसिकता का प्रतीक है। 2015 की इंटर पार्लियामेंट्री यूनियन (IPU) की रिपोर्ट में इस मोर्चे पर भारत को 103वें नंबर पर रखा गया । इस सूची में पहले दस नंबर पर रवांडा, बोलिविया, अंडोरा, क्यूबा, सेशेल्स, स्वीडन, सेनेगल, फिनलैंड इक्वेडोर व दक्षिण अफ्रीका जैसे देश हैं। पड़ोसी देशों में सिर्फ श्रीलंका से बेहतर स्थिति में है भारत।[13]

निर्णय निर्माण:

निर्णय निर्माण किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व को उजागर करने का माध्यम है और अधिकार भी । आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर महिलाओं का निर्णय निर्माण का स्तर उन महिलाओं से बेहतर होता है जो आर्थिक रूप से

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

परिवार या पति पर निर्भर होती हैं । शिक्षा का मानव जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है लेकिन वह शिक्षा किस प्रकार की है यह अलग प्रश्न है । महिलाओं की शिक्षा की बात करें तो भारतीय समाज विशेष रूप से ग्रामीण महिला की शिक्षा से ज्यादा उसके घरेलू कार्य व विवाह को ज्यादा प्राथमिकता दी जाती है । अधिकांश लड़कियों की हाई स्कूल के बाद शादी कर दी जाती है। अधिकांश महिलाएँ माध्यमिक शिक्षा ही प्राप्त कर पाती हैं। उच्च एवं व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त महिला प्रतिनिधियों की संख्या बहुत कम है । इसलिए निर्णय-निर्माण के मामले में उच्च राजनीतिक स्तर में महिलाओं की संख्या भी बहुत कम है। जो हैं भी उनमें राजनीति में रुचि नहीं होने के कारण यह स्तर बढ़ नहीं रहा है। अधिकांश निर्णय-निर्माण का स्तर मध्यम व निम्न है।

अवसर एवं सामाजिक अनुभव से महिला प्रतिनिधियों के सीखने की संभावना बढ़ जाती है और उनमें निर्णय निर्माण की क्षमता भी विकसित होती है । पंचायती राजनीति में आज भी जातिगत भेदभाव एवं उच्च जाति के प्रतिनिधियों के हस्तक्षेप से दलित एवं पिछड़े वर्ग की महिला प्रतिनिधियों का निर्णय निर्माण प्रभावित होता रहता है। विवाहित महिला प्रतिनिधि के निर्णय में पति या पुत्र का हस्तक्षेप भी उन्हें स्वतंत्र निर्णय लेने में बाधा उत्पन्न करता है । इसका प्रमाण है स्थानीय स्वशासन इकाई की बैठकों में महिला प्रतिनिधि के बदले उनके पति या पुत्र भाग लेना। पुरूष प्रधान समाज एवं विचार महिलाओं के लिए चुनौती ही है।

नेतृत्व एवं प्रभाव:

वर्तमान में राजनीतिक नेतृत्व का जो स्वरुप उभर कर सामने आया है उसमें अनुचित तरीके बेईमानी, जनता को मूर्ख बनाने का चलन, शराब व धन का दुष्प्रयोग, षड़यंत्र आदि आम हैं । महिलाओं द्वारा इन तरीकों को अपना पाना समाज द्वारा निर्धारित उनके व्यवहार के विरूद्ध जाता है । यानि की महिलाएँ पुरूषों की अपेक्षा बहुत कम भ्रष्ट होती हैं । महिलाएँ अच्छी नेत्री हो सकती हैं लेकिन पितृसत्तात्मक समाज द्वारा उनके नेतृत्व पर कम भरोसा जताया जाता है जबकि पुरूष नेतृत्व कितना भी भ्रष्ट व जनविरोधी हो उनको ही समाज में स्वीकार्यता मिलती है।

राजनीतिक चेतना, निर्णय-निर्माण और राजनीति से संबंधित प्रक्रियाओं के मूल्यांकन का मुख्य साधन है। महिलाओं की पिछड़ी चेतना उनके राजनीतिक नेतृत्व को सीमित करती है। इसका प्रमुख कारण यह है कि लोक विमर्श के स्थानों (दुकानों, सार्वजनिक स्थलों आदि में होने वाली राजनीतिक चर्चा) में महिलाएँ आम तौर पर शामिल नहीं हो पाती हैं क्योंकि पूर्व से चली आ रही पितृसत्तात्मक सामाजिक परंपरा ने महिलाओं को ऐसी आजादी नहीं दी है। महिलाएँ सामान्य जीवन में होने वाली राजनीतिक बहसों का भी हिस्सा नहीं बन पाती हैं। यदि लोक विमर्श में महिलाओं की उपस्थिति नहीं है तो उनकी राजनीतिक चेतना के विकास में अवरोध उत्पन्न होता है।

समाज में लैंगिक कार्यों का विभाजन इस प्रकार से होता है कि पारिवारिक कार्यों की सम्पूर्ण जिम्मेदारी महिलाओं के हिस्से आती हैं । खाना बनाना, बच्चों, परिवार के सदस्यों की देखभाल और अन्य सभी कार्य महिला के जिम्मे ही होते हैं जबकि पुरूषों पर इस प्रकार की जिम्मेदारियाँ कम या नहीं के बराबर होती हैं ।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

पुरूष रोजमर्रा की राजनीतिक गतिविधियों जैसे राजनीतिक प्रचार, जन-संपर्क, चुनावी चर्चा, बैठकें आदि राजनीतिक गतिविधियों में आसानी से हिस्सा ले पाते हैं । कभी-कभी देर रात तक भी यह गतिविधियाँ चलती रहती हैं, जिसमें भागीदारी करने से महिलाओं की घर की जिम्मेदारी एवं कार्य प्रभावित होते हैं । घर के कार्यों को प्राथमिकता देने की मजबूरी के कारण महिलाएँ नेतृत्व में चुने जाने के बाद भी अधिक प्रभावी रूप से कार्य नहीं कर पाती हैं। जो परिवार आर्थिक रूप से अधिक संपन्न है और उनके घरेलू कार्यों के लिए नौकर या कर्मी हैं वैसी महिलाएँ राजनीतिक नेतृत्व में अधिक समय दे पाती हैं । जातिगत भावना भी राजनीतिक नेतृत्व व प्रभाव को प्रभावित करती रहती है।

निष्कर्ष एवं सुझाव:

समाज में महिलाओं के सशक्तिकरण को गति प्रदान करने के लिए राजनीतिक सशक्तिकरण एक आवश्यक शर्त है । "लेकिन महिलाओं की मुख्य समस्या उनकी शैक्षिक प्राप्ति का निम्न-स्तर है । ग्रामीण महिलाओं में निरक्षरता दर और स्कूलों में ड्रॉप-आउट रेट काफी अधिक है । शिक्षा का अभाव देश की अन्य विकास प्रक्रियाओं में उनकी भागीदारी में बाधा उत्पन्न करता है । कानूनी अधिकारों के बारे में कम जानकारी होने से ग्रामीण महिलाओं के सामाजिक और राजनीतिक सशक्तिकरण में रूकावट पैदा होती है । निरक्षरता महिलाओं को अनेक तरह से प्रभावित करती है । इसके कारण उनके कौशल और क्षमता का स्तर उच्च नहीं हो पाता।"[14] इस स्थिति के मूल में लैंगिक असमानता है।

हालाँकि महिलाओं को 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन द्वारा अनिवार्य आरक्षण के माध्यम से स्थानीय स्वशासन में प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ है लेकिन महिला प्रतिनिधियों के पति, पुत्र व प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व की उपस्थिति जैसी समस्याएँ भी देखने को मिलती है । प्रॉक्सी प्रतिनिधित्व की समस्या को हल करने के लिए राजनीतिक सशक्तिकरण से पहले सामाजिक सशक्तिकरण के मार्ग का अनुसरण करना होगा । स्थानीय प्रतिनिधियों में विशेषज्ञता के विकास के लिए उन्हें प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए ताकि वे नीतियों एवं कार्यक्रमों के नियोजन एवं कार्यान्वयन में अधिक योगदान कर सकें। अध्ययन से यह पता चलता है कि स्थानीय सरकारों में महिला राजनीतिक प्रतिनिधित्व से महिलाओं के आगे आने और महिला विरूद्ध अपराधों की रिपोर्ट दर्ज कराने की सम्भावनाओं में वृद्धि हुई है।

महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि विभिन्न स्थितियों के सशक्तिकरण हेतु सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थाएँ अपने स्तर से महिला सशक्तिकरण पर कार्य कर रही हैं । मिले-जुले सुखद परिणाम हमारे समक्ष हैं । शिक्षा का क्षेत्र हो या आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक क्षेत्र हो या राजनीतिक सशक्तिकरण, इतना ही नहीं कला, खेल, चिकित्सा, विज्ञान आदि जटिल क्षेत्रों में भी महिलाओं ने कीर्तिमान स्थापित किया है । लेकिन इतना पर्याप्त नहीं है। महिला सशक्तिकरण के ग्राफ को और आगे ले जाने के लिए, समतामूलक समाज व राष्ट्र निर्माण के लिए, राष्ट्र के विकास में उनकी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए हमें महिलाओं के प्रति सकारात्मक सोच एवं उन्हें सकारात्मक माहौल उपलब्ध कराना होगा।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 10 Issue 09, September 2020
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

गांधी के विचार में स्त्री पुरूष की सहचरी है तथा उसे पुरूष के समान ही स्वाधीनता प्राप्त है । जिस तरह पुरूष को अपनी गतिविधियों के क्षेत्र में सारे अधिकार प्राप्त हैं, उसी तरह स्त्री भी अपने क्षेत्र में सर्वोच्च स्थान की अधिकारिणी हैं । स्त्री को स्वतंत्रता न देने एवं निर्णयों में भागीदार न बनाने से भी पारिवारिक व्यवस्था में तनाव उत्पन्न होता है ।[15] और जब तक हमारा परिवार तनावमुक्त व खुशहाल नहीं होगा हम समाज के विकास एवं समृद्धि का लक्ष्य पूरा नहीं कर पायेंगे । महिलाओं को सशक्त करने की शुरुआत हमें अपने-अपने परिवार से करनी होगी। इसे पारिवारिक उत्तरदायित्व समझना होगा जिसे परिवार का हर व्यक्ति अपना नैतिक कर्तव्य समझे तथा तदनुरूप कार्य व्यवहार करे । जो स्त्री परिवार में मान पाती है उसका सामाजिक मान भी बढ़ता है । जिसके सशक्तिकरण की हम बात कर रहे हैं उसे खुद भी जागरूक होकर अपने हक के लिए आगे आना होगा । ताकि वे पुरूषों के साथ बराबरी से खड़े रहकर परिवार, समाज व देश के विकास में योगदान कर सके।

सन्दर्भ:

1. डॉ. श्यामाप्रसाद प्रशान्त, पंचायती समाज, बहुजन कल्याण प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ट- 05
2. डॉ. राधा कुमुद मुखर्जी, लोकल गवर्नमेन्ट इन एनशिएंट इंडिया, ऑक्सफोर्ड, क्लोरेंडन प्रेस, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, 1947, पृष्ठ- 37
3. अरुण कुमार शर्मा, भारत में स्थानीय शासन, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृष्ट- 13
4. डॉ. हरिश्चन्द्र शर्मा, भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1990, पृष्ठ- 29
5. अरुण कुमार शर्मा, उपर्युक्त, पृष्ट 17-18
6. अनुच्छेद 40, अनुच्छेद 246, भारत का संविधान, भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), राजभाषा खण्ड, नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ- 36, 177
7. सातवीं अनुसूची की राज्य सूची का क्रमांक 5, उपर्युक्त, पृष्ठ- 363
8. रिपोर्ट ऑफ द पंजाब लोकल गवर्नमेन्ट (अर्बन) इनक्वायरी कमिटी, 1957, पृष्ठ- 98
9. भारत सरकार, योजना आयोग, तृतीय पंचवर्षीय योजना, 1961-66, पृष्ठ- 693
10. अरुण कुमार शर्मा, उपर्युक्त, पृष्ट 21-23
11. नवभारत टाइम्स, 17 फरवरी 2018
12. अमर उजाला, 21 मई 2016
13. जनसत्ता, 02 जून 2019
14. राकेश श्रीवास्तव, ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण: आगे की राह, कुरूक्षेत्र, जनवरी 2018, पृष्ठ- 6
15. दुर्गा कुमारी, परिवार संस्था की उपादेयता और गांधी, गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति, मई-अगस्त 2019, पृष्ट- 86